IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

भक्ति साहित्य में व्यक्त नैतिक मूल्य

डॉ. कविता चांदगुडे
सह प्राध्यापक
किटेल कला महाविध्यालय, धारवाड़

हिंदी साहित्य में वि.सं.१३७५ से वि.सं.१७०० तक का समय भक्तिकाल के नाम से जाना जाता है।भक्ति ईश्वर के प्रति प्रेम है। श्रद्धा और प्रेम का योग ही भक्ति माना जाता है। हिंदी साहित्य के भक्तिकाल मेंभक्ति की दो धाराएँ निर्गुण एवं सगुण प्रचलित रहीं।निर्गूण भक्ति ज्ञान एवं प्रेम के माध्यम से किए जाने के कारण ज्ञानाश्रयी एवं प्रेमाश्रयी शाखा के रूप में जानी जाती रहीं।ज्ञान के माध्यम से ईश्वर प्राप्ति में विश्वास करनेवालों को साहित्येतिहासकारों ने **संत** और प्रेम मार्गियों को **सूफी** कहा है। निर्गुण उपासक संतों ने अपने जीवन के अनुभूत सत्यों को शब्दबद्द किया जो संत काव्य के रूप में प्रचलित रहा।संतों ने अपने पूर्ववर्ति विभिन्न संप्रदायों से प्रभावित रहे और उनके उपयुक्त सिद्दांतों को अपनाकर जनसामान्य के लिए आध्यात्मिक एवं धार्मिक जीवन का मार्ग प्रशस्त किया। सगुणवादी उस समय के वैष्णव भक्ति आंदोलनों से प्रभावित होकर राम और कृष्ण भक्ति का प्रसार किया जो **भक्त** के रूप में जाने जाते हैं।निर्गुण एवं सगुण दोनों ने ही अमोघ साहित्य की रचना कर हिंदी साहित्य को संपन्न किया है।इनकी वाणी मानवधर्म व विश्वधर्म को ही पुष्ट करती हैं जो समसामयिक संदर्भ ही नहीं युगों युगों तक के लिए उपयुक्त है इसीलिए यह युग हिंदी साहित्य का सुवर्ण युग के नाम से जाना जाता है। इन कवियों ने भक्तिभावना के साथ-साथ समाज का उन्नयन करने का भरसक प्रयास किया है।इस दिशा में समाज के सम्मुख नैतिक मूल्यों को महत्व देते हुए सदाचारी बनने का आग्रह जनता से किया है।नैतिकता लैटिन शब्द 'एथोस' से लिया गया है जिसका अर्थ चरित्र, आदत, रीतिरिवाज है। नैतिकता समाज का वह तत्व है जिसकी उपस्थिति में सभ्य समाज का निर्माण किया जा सकता है। नैतिकता के संबंध में विभिन्न व्याख्यान उपलब्ध हैं।उचित अनुचित विचार की संकल्पना को नैतिकता कहा जाता है। नैतिकता मानव का वह अमूल्य वस्तु है जो उसके सद्गुणों को प्रदर्शित करता है। नैतिकता का आधार पवित्रता, न्याय और सत्य है। अंतरात्मा की सही आवाज ही नैतिकता है। भक्ति का उद्देश मुक्ति की कामना है। भक्ति के मार्ग में अग्रसर होने के लिए सदाचार की महती आवश्यकता है। यह युग अंधविश्वास, रूढीवादिता, जातपात, छुआ-छूत आदि में जकडा हुआ था। अतः जनता की अज्ञानता को दूर कर स्वस्थ समाज का निर्माण करने का बीडा उठाया। इन कवियों ने भक्ति आत्मिक सुख के लिए, मोक्ष की साधना के लिए मानकर भक्तिसाहित्य की रचना की।स्वांत सुखाय के लिए सृजित यह साहित्य परहिताय को साधता रहा। लोककल्याण के भाव से अपने अनुभवों का प्रसार जनता में करते रहे। अतः ये महाकवि संत, महात्मा, समाज सुधारक, युगप्रवर्तक, लोकनायक, क्रांतिकारी आदि के रूप में विख्यात रहे हैं।

भक्तिकाल के कवियों ने समाज में व्याप्त विषमता को दूर करने नैतिक मूल्यों की सीख देते रहे। सच्चरित्र का विकास सुसंगति से संभव है बताया है। कबीर अपने संगति कौ अंग में अनेक प्रकार से समझाते हैं- **कबीर तन पंषी भया, जहाँ मन तहाँ उडि जाइ। जो जैसी संगति करै, सो तैसे फल खाइ॥ मूरख संग न कीजिए, लोहा जलि न तिराइ।कदली-सीप-बूवंग मुख, एक बूंद तिहँ जाइ॥** काजल केरी कोठडी, तैसा यहु संसार।बलिहारी ता दास की, पैसि र निकसणहार॥रहीमदास भी संगति का महत्व जताते हैं। नीच की संगति को आग के समान छोडनी चाहिए क्योंकि वह शरीर को तो जलाती है ही बुझने पर भी कालिख ही लगाती है-**ओछे की सतसंग रहिमन तजहूं अंगार ज्यों तातो जारै अंग सीरे पै कारो लगै।** बुरे लोगों का स्वभाव ही है कि वे अच्छाई में भी बुराई ही देखते हैं- **ससि की शीतल चांदनी सुंदर सबहिं सुहाय, लगे चोर चित में लटी घटि रहीम मन आय।** कवियों ने जग मिथ्या ईश्वर एक मात्र सत्य है। जीव माया के जाल में फंसकर इस सत्य को भूल जाता है।तुलसी कहते हैं ईश्वर को न जानने के कारण यह संसार सत्य प्रतीत होता है और उसे जानने के बाद संसार मिथ्या है -**झुठेउ सत्य जाहि बिनु जानें। जिमि भुजंग बिनु रजु पहिचाने। जेहि जाने जग जाई हेराई जथा सपन भ्रम जाई।** सत्य का मार्ग बडा दुरूह होता है। बहुत कम लोग इस पर टिक पाते हैं। कबीर कहते हैं कि सच्चे मन में ही परमात्मा का निवास होता है- "**आंच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप। जाके हृदय सांच है ताके हृदय हरी आप।**"वाणी के संबंध में कहते हैं कि बोलने से पहले ही सोच समझकर बोलना चाहिए। कबीर कहते हैं- **बोली एक अनमोल है, जो कोई बोलै जानि। हिये तराजू तौलि के, तब मुख बाहर आनि॥** वहीं रहिम का यह दोहा इसे स्पष्ट करती है- **बिगरी बात बने नहीं, लाख करो किन कोय। रहिमन फाटे दूध को, मथे न माखन होय॥** वाणी में मधुरता और सत्यता जीवन में आनंद लाता है। कटु शब्दों के प्रयोग करने से हमें बचना चाहिए। कबीर कहते हैं- **ऐसी बानी बोलिए मन का आप खोय। औरन को सीतल करे आपहु सीतल होय।**तुलसीदास भी मीठे वचन पर बल देते हैं- **तुलसी मीठे वचन ते, सुख उपजे चहुँ ओर। वशीकरण यह मंत्र है, तजिये वचन कठोर॥** भक्ति साहित्य में संसार के समस्त जीवराशी के प्रति दया, करुणा, ममता आदि भाव व्यकत हुआ है। तुलसी जहाँ दया ही धर्म का मूल है, पाप मूल अभिमान। तुलसी दया न छाडिए, जब लग घट में प्राण। कहते हैं वहीं कबीर दया धर्म का मूल है, पाप मूल संताप। जहां क्षमा तहां धर्म ही, जहां दया तहां आप॥ कवियों ने समय के महत्व को बार बार बताया है।भक्ति का एक मात्र लक्ष है मोक्ष प्राप्ति है । उनके अनुसार जन्म मरण

के चक्र से मुक्त होना ही मोक्ष है और यह मनुष्य योनी में ही संभव है। अनेक जन्मों के संचित पुण्य से मानव जन्म मिलता है। इस मानव जन्म की सार्थकता इसी में है कि हर एक को मुक्ति पाने की कोशिश करना चाहिए। इसीलिए विषय वासना में इसे न गवाकर मुक्ति की साधना में जुटना चाहिए। समय रहते यह कार्य होना चाहिए। इसीलिए समय को व्यर्थ गवाना नहीं। कबीर कहते हैं- **काल करे सो अब कर, आज करे सो अब। पल में परलय होएगी, बहुरी करोगे कब।। रात गवाय सोय कर, दिवस गवायो खाय। हीरा जनम अनमोल था कौडी बदले जाय॥**तुलसीदास ने भी यही कहा है- **तुलसी नर क्या बडा, समय बडा बलवान। भीला लूटी गोपियाँ,वही अर्जुन वही बाण॥ तुलसी भरोसे राम के, निर्भय हो के सोए। अनहोनी होनी नहीं, होनी हो सो होए॥** समय के आगे किसीका बस नहीं, वक्त के रहते ही कार्य करना चाहिए।

इन महात्माओं ने अनेक नीतिपरक विचार बताए हैं जो भक्ति क्षेत्र में ही नहीं वयक्तिक एवं सामाजिक जीवन में भी बहु उपयुक्त हैं। जन सामान्य कठिन स्थिति में ही परमात्मा को याद करता है।कबीर कहते हैं कि सच्चा उपासक जीवन के प्रत्येक घडी में परमात्मा का स्मरण करता है -दुख में सुमिरन सब करे, सुख में करे न कोय। जो सुख में सुमिरन करे, दुख काहे को होय॥ आत्मा और परमात्मा के संबंध को स्पष्ट करते कहते हैं कि कबीर ने इन दोनों की एक होने की स्थिति को इस दोहे से स्पष्ट किया है- **जल में कुंभ, कुंभ में जल है, भीतर बाहर पानी फूटा कुंभ जल जल ही समाना यह तथ कहो गयानी॥**इसी प्रकार अपने अंतर में बसे परमात्मा को अपने अंतर में ढूंढने को कहते हैं- **तिल में तेल है, ज्यों चकमक में आग। तेरा साईं तुझ में है, तू जाग सके तो जाग॥**इसीलिए मंदिर मस्जिद, रोजा उपवास, तीर्थ आदि का विरोध कर कहते हैं कि ये सभी बाहरी क्रियाएँ हैं, दुनिया का घोर धंधा है जो हमें व्यर्थ भटकाता है। निर्गुणवादि कबीर हिंदुओं की मूर्ति पूजा का विरोध- **पाथर पूजै हरि मिलै तो मैं पूजूं पहार। इससे ता चाकी भली पीस खाय संसार॥** कहकर किया है। ऐसे ही मुल्लओं के कहने पर नमाज करने की विधा का विरोध- **कांकर पाथर जोरिकै मस्जिद लई चुनाय। ता चढी मुल्ला बांग दै का बहिरा हुआ खुदाय।।** भक्ति का सरल एवं अन्यतम रूप नामस्मरण एवं भजन को ही जनता के सम्मुख प्रस्तुत किया है। यह भी शुद्द भाव से होना चाहिए।भक्तिकाल में जनसामान्य अनेक विषमताओं से ग्रसित होकर व्यथित थे। इन कवियों ने नीति उपदेशों से उनको उभारने का प्रयास किया। इन्होंने भक्ति का एक नया ,शुद्द व सहज रूप प्रस्तुत किया जो उस समय के हताश, तिरस्कृत जनता का ढाढास बंधाया।निर्गुणवादि संत प्रायः सामाजिक एवं आर्थिक दृष्टि से निछले स्तर के थे। पर इनमें कहीं भी आत्महीनता का भाव नहीं दिखता। इनमें इतना अपार आत्मविश्वास था कि इन्हों ने अपना-अपना स्वतंत्र संप्रदाय या पंथ स्थापित किया। संत जीवन की विषमताओं से भले ही प्रेरित होकर आध्यात्मिकता की ओर बढे हों, पर सत्संग, ज्ञान एवं अनुभव प्राप्त कर उनके व्यक्तित्व एवं चरित्र पूर्णतः शुद्द, परिशुद्द एवं निर्मल बन गया था।सिद्द एवं नाथों से प्रभावित होकर भी उनके समान लोकविरोधी पद्दतियों को प्रचारित नहीं किया।लोकमर्यादा के उपयुक्त आध्यात्मिक मार्ग को प्रशस्त किया।जनता को धर्म का सही अर्थ बताकर उस पर चलाना उनका उद्देश था।स्वयं उच्च आदर्शों का अनुकरण करते हुए निदर्शन बन जनता का मार्गदर्शन किया।

संतों ने आचरण की शुद्दता पर जोर देते कहते हैं- **बुरा जो मैं देखन चला, बुरा न मिलिया कोय। जो मन खोजा आपना, तो मुझसे बुरा न कोय।** इसमें दुसरों को दोषी न ठहराते ह्ये खुद को परखते रहना चाहिएकहा है।ऐसे ही हमारी निंदा करनेवालों का हमें सम्मान करना चाहिए क्योंकि वे ही हमारी गलतियों को सुधारते हैं-**निंदक नियरे राखे, आंगन कुटी छवाय। बिन पानी, साबुन बिना, निर्मल करे सुभाय।** हमें शांति संयम को अपनाना चाहिए- धीरे धीरे रे मना, धीरे सब कुछ होए। माली सींचे सौ घडा, ऋतु आए फल होए॥ जीवन में अधिक की लालसा नहीं करनी चाहिए- **साईं इतना दीजिए, जामें कुटूंब समाए। मैं भी भूखा न रहूं, साधू न भूखा जाए।** रहीम ने भी अद्भुत ढंग से निति को अपने दोहों में बताया है- **रहिमन देखि बडेन को, लघु न दीजिए डारि।जहाँ काम आवे सुई, कहा करे तरवरि॥** कहकर प्रत्येक वस्तु की महत्व को बताया है। अपने दुख को दुसरों के सम्मुख प्रकट करने से कोई लाभ नहीं स्पष्ट किया है।**रहिमन निज मन की बिथा, मन ही राखो गोय। सुनी इठलैहै लोग सब, बांटी न लेहैं कोय॥** जो सज्जन होता है वह कभी अपनी सज्जनता को त्यागता नहीं- **जो रहिम उत्तम प्रकृति का करि सकत कुसंग। चंदन विष व्यापे नहीं लिपटे रहन भुजंग॥** रुठे प्रियजनों को मनाने के लिए कहते हैं- **रूठे सुजन मनाइए, जो रूठे सौ बार। रहिमन फिरि फिरि पोइए, टूटे मुक्ता हार॥** ऐसे संतों ने अपनी वाणी से हमें सरल, सुंदर और पवित्र जीवन जीने का उपदेश दिया है।सूफियों ने अपने संप्रदाय का प्रसार हिंदू प्रेम कथाओं के माध्यम से किया। उन्होंने हिंदू संस्कृति का मंडन करते हुए हिंदू और मुस्लिम में एकता स्थापित करने का कार्य किया।

सगुणवादियों ने भारतीय समाज और संस्कृति का उन्नयन करने का प्रयास किया। समकालीन समाज में व्याप्त विसंगतियों, कुरीतियों जैसे ऊँच-नीच, छुआछूत, जातिपाति के भेद भाव को दूर करने का प्रयास किया। उस युग में जनता मुगलों के शोषण से आतंकित थी। समाज में फंसी विकृतियाँ, विसंगतियाँ, धर्म के नाम पर चल रहे कर्मकांड, ढोंग, पाखंड का बढावा आदि से नैतिकता का पतन हो रहा था। ऐसे संदर्भ में तुलसीदास अव्यवस्थित समाज को व्यवस्थित करने के लिए प्रत्येक वर्ग, वर्ण, जाति में जीवनमूल्यों की स्थापना के लिए प्रेरित करते हैं।इसीलिए उन्होंने राम के चरित्र के माध्यम से समाज के सामने एक आदर्श को प्रस्तुत किया।डॉ.राजपत दीक्षित लिखते हैं- "तुलसीदास का सारा प्रयास जनता जनार्दन के मानस परिष्कार के लिए था। वह जिस समाज की कल्पना करके चले वह स्वार्थ त्याग और बलिदान सिखानेवाला था और उन्होंने जिस राज्य की भावना की थी वह लोकाराधन के लिए राज्य, सुख,राग आदि सबको निछावर कर देनेवाला था। उन्होंने राजा और प्रजा के लिए जो आदर्श रखा था वह संक्षेप में प्राचीन वर्ण व्यवस्था का पुनरुज्जीवक और रामराज्य का प्रस्थापक था।" तुलसी का साहित्य लोकमंगल, समन्वयता और विश्वबंधुत्व की भावना पर केंद्रित है। जातिपाति, भेदभाव के कारण हिंदू समाज पतन के कगार पर था तो उन्होंने इन रूढियों को तोडने का प्रयास किया- **"मेरे जाति-पाति न यहाँ काहू की जातिपाति, मेरे कौ काम को न हौं, काहु के काम को, साधु कै असाधु कै भयै के पोच सोचु कहा, का काहू के द्वार परौ जे हौं मो हौं राम को।"** तुलसी निर्गुण-सगुण, शैव-वैष्णव, शाक्त- वैष्णव में समन्वयता लाने का प्रयास किया। शैव और वैष्णव मतों का समर्थन करते हुए शंकर द्वारा राम की स्तुति करवाया- **जय राम रमा रमन समन। भवताप भजाकुल परिजन॥ अवधेश सुरेस रमेश विभो। सरनागत मागत पाहि प्रभो॥** तो श्रीराम द्वारा भी शंकर जी का गुणगान करवाया है- और एक गुपुत मत, सबसि कहएं कर जिति। सकर भगन बिना नट, भगति न पावै मोहि॥ सामाजिक क्षेत्र में भले ही वर्ण व्यवस्था को स्वीकारते हैं किंतु भक्ति के क्षेत्र में जातिभेद आदि को अमान्य

घोषित किया।समाज के निम्न वर्ग के नाई, धोबी, केवट, निषाद, शबरी, भील, कोल,किरात आदि को भी अपने साहित्य में स्थान दिया और राम द्वारा उनका आदर करवाकर इसे सिद्द किया है। निषादराज को गले लगाना, केवट द्वारा पाव धुलाना, शबरी के झूठे बेर खाना ये सभी राम के समदर्शिता को उजागर करती है। राम के आदर्श चरित्र से समज के सामने प्रत्येक को अपने धर्म और कर्तव्य का पालन करने का संदेश दिया है।

कृष्ण भक्तों ने भी समाजिक क्षेत्र में वर्णाश्रम धर्म को ही मान्यता देते हैं। किंतु ब्रज में गोप-गोपियों के साथ एक होकर उस लीला का आनंद अनुभव करते हैं। उन्होंने भी सदाचरण पर जोर देते हैं। मीराबाई में समाज के बंधनों का विरोध, उच्च वर्ग के पाखंड के प्रति विद्रोह स्पष्ट व्यकत हुई है।नारी स्वातंत्र की प्रथम रव मीरा में गुंजित है। जातिभेद, कुल की मर्यादा को भुलाकर वह साधुसज्जनों के संगति में भजन में सम्मिलित होकर ऊंचनीच के भेद भाव को भी मिटा दिया है। प्रभु श्रीकृष्ण को अपने स्वामी के रूप में वरण कर अपने प्रेम को निस्संकोच भाव से व्यक्त किया है। उनकी विरहानुभूति अलौकिक प्रियतम के लिए व्यक्त है।**मेरे तो गिरिधर गोपाल दूसरा न कोई। जाके सिर मोर मुकुट, मेरो पति सोई॥ तात मात भ्रात बंधु, अपना नहीं कोई॥ छाँडि दई कुल की कान, क्या करेगा कोई। संतन ढिग बैठि बैठि, लोक लाज खोई। मोती मूँगे उतार, बन माला पोई। अँसुवन जल सींचि सींची, प्रेम बेलि बोई॥अब तो बेल फैलि गई, आनंद फल होई। दूध की मथनिया, बडे प्रेम से बिलोई॥ माखन सब काढि लियो, छाँछ पिए कोई। आई मैं भक्ति काज, जगत देखि रोई। दासी मीराँ गिरिधर प्रभु,तारो अब मोई॥**

निष्कर्ष-

आज विश्व जाति, धर्म, संप्रदाय, भाषा, देश, समाज के नाम से ज्वलित हो रहा है| मानवता ही सर्वोपरि है इसे भुलाकर धर्म्युद्द, जिहाद, संस्कृति, सभ्यता, परंपरा या अस्मिता के रक्षण का नाम देते हुए बार-बार विश्वशांति को भंग कर मनु कुल का नाश किया जा रहा है। अतः संकुचित मनोवृत्ति को छोडकर इस सुंदर सृष्टी एवं मनुकुल की रक्षा के लिए वचनबद्द होना चाहिए। भक्ति साहित्य का यह उत्स रहा है।भक्ति साहित्य हिंदी साहित्य का अनमोल धरोहर है। भक्ति ही प्रधान होते हुए भी लोक व्यवहार का ज्ञान यह साहित्य देता है। ये कालातीत रचनाएँ हैं। धर्म, ज्ञान,भक्ति एवं कर्म का सम्यक ज्ञान देती है। इसीलिए सभी संत एवं भक्त कवियों ने अपने अपने संप्रदाय का प्रचार करते हुए भी समाज में समानता, शांति एवं उच्च आदर्शों की स्थापना करने का भरसक प्रयास करते रहे। इसीलिए भक्ति, अध्यात्म के साथ साथ नैतिक मूल्यों का वर्णन बराबर इस साहित्य में हुआ है। अशिक्षित, अज्ञानी, अंधविश्वासी, रूढीवादी, हीनताबोध से ग्रस्त जनता में आत्मविश्वास को जगाते हुए आदर्श जीवन जीने के लिए प्रेरित करता रहा है। इसमें व्यक्त मूल्य न केवल समकालिक हैं वरन सर्वकालिक भी हैं।युगोंयुगों तक यह साहित्य पठन, पाठन एवं अनुकरणीय है।इस युग के कवि अमर हैं और उनका काव्य भी अजरामर है।

आधार ग्रंथ -

१.हिंदी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास, डॉ. गणपतिचंद्र गुप्त, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, १९९४
२. प्राचीन काव्य-सुधा, डॉ. पुष्पपाल सिंह , आर्य प्रकाशन मंडल, नई दिल्ली, २०१८
३.हिंदी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ, डॉ. शिवकुमार शर्मा, अशोक प्रकाशन, नई दिल्ली, १९६८